The Academic
International Journal of Multidisciplinary Research

An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume 4 | Issue 10 | October 2026
ISSN: 2583-973X (Online), SJIF IF(2026): 5.6
Website: www.theacademic.in

विवेकी राय के उपन्यासों में विघटनोन्मुख ग्रामीण संस्कृति

पायल

(शोधार्थी), ईमेलः payalaheria@gmail.com

डॉ० शमशाद अली

असिस्टेण्ट प्रोफेसर (हिन्दी), जी०एफ० कॉलेज, शाहजहानपुर, यू०पी०

ईमेल: shahmshadspn01@gmail.com

DOI : https://doi.org/10.5281/zenodo.24491198

भारतीय संस्कृति की संसार की अति प्राचीन संस्कृतियों में गणना की जाती है। सामाजिक मूल्यों का निर्धारण संस्कृति द्वारा ही निर्धारित एवं व्यवहरित होता है। समय-समय इस के तत्वों में विघटन बदलाव विकार एवं परिवर्तन होते रहते है जो इसे चलाएमान रखते हैं। भारतीय संस्कृति शहरी और ग्रामीण दो रूपों में मूल्यों को सुरक्षित रख नए मूल्यों को अपनाती और कतिपय मूल्यों को त्याग कर इसकी विकास यात्रा में सहायक सिद्ध होती है। यही परिवर्तन उसकी आत्मा है। दोनों संस्कृतियों की अपनी-अपनी विशेषताएँ है। शहरी संस्कृति की चमक-दमक नगरीय संस्कृति को अपनी ओर आकर्षित एवं प्रभावित कर रही है जिसके फलस्वरूप ग्रामीण संस्कृति विघटन अथवा पतनोन्मुख है। विवेकी राय ने अपने उपन्यासों में इस मानव मूल्यों के ग्रामीण संस्कृति में ह्रास पतन एवं विघटन को बौद्धिक एवं मार्मिक ढंग से उद्घाटित किया है।

शब्दार्थ- संग्रहीत इकट्ठा, आबद्ध, हस्तानांतरित एक से दूसरे को पहुँचना, विरासत पैत्रिक संपत्ति, समोनन्त समान रूप से उन्नत, पुनीत कृत्य-नैतिक कर्म, परिष्कृत स्वच्छ, परिभार्जित- सुघरा हुआ, विभक्त बँटा हुआ, सर्वविदित-सबको ज्ञात, दर्शनाधारित-दर्शन पर आधारित, जीवंत जिंदा, विघटनोन्मुख घटन की और जंगली लता का सुंदर लाल फल, जाता हुआ, अनभिज्ञ अनजान, गुलकाँकड़ी सतुद्द्देश्य- सच्चा उद्देश्य।

किसी समाज या समूह के लोगों की जीवन शैली, उनके मूल्य, रीति-रिवाज, ढंग-व्यवहार, भाव, आचार-विचार भाषा, कला और सामाजिक मान्य या समूहगत मान्यताओं को संस्कृति के रूप में स्वीकार किया जाता है। समाज शास्त्री इसे संसकार से उत्पत्ति के कारण अच्छे कर्म या अच्छे संस्कारों का पर्याय भी मानते हैं। यह अनेकताओं का ऐसा जटिल संग्रह है जिसमें उपर्युक्त तत्त्वों के अतिरिक्त कानून, कला ज्ञान नैतिकता विश्वास एवं आस्था आदि सभी

Disclaimer: The opinions, interpretations, conclusions, recommendations, analyses, and statements expressed in this research article are solely those of the author(s) and do not reflect the views, policies, or positions of the Publisher, Chief Editor, Editors, Editorial Board, Reviewers, or their affiliated institutions. The author(s) are solely responsible for ensuring the originality, authenticity, and integrity of the manuscript and for ensuring that it is free from plagiarism, AI-generated content, copyright infringement, data falsification, and any other form of academic misconduct.

संग्रहीत होते हैं। संस्कृति पूर्वजों से पीढ़ी दर पीढ़ी प्राप्त होने वाली ऐसी सामाजिक या नैतिक संपत्ति है जो भविष्य-लोक को हस्तानांतरित होती रहती है। इस में निहित संस्कार आदि को व्यक्ति आजीवन सीखता रहता है और इस नीतिगत पूंजी को अगली पीढ़ी की विरासत के रूप में छोड़ जाता है। इस प्रकार संस्कृति निरंतर गतिमान और समोन्नत रहती है।

संस्कृति का तत्वगत विश्लेषण यह फल प्रदान करता है कि समाज या समूह में जीवन यापन करते हुए भाषा को संवाद-साधन या दृष्टिकोण के रूप में मनुष्य अपनाता है। इसी के माध्यम से समाज में आचरण, वैचारिक प्रस्तुति, पर्व-उत्सव, संगीत, गीत, नृत्य कलाओं और उन की अभिव्याक्ति से परिचित होकर उनमें निपुणता प्राप्त करता है। साथ ही सामाजिक, नैतिक एवं धार्मिक मान्यताओं के उचित-अनुचित मानदंडों का ज्ञान प्राप्त करता है। पुनीत कृत्यों की उपयोगिता एवं उनकी भूमिका को जानकर जीवन में उनका सदुपयोग करता है। कह सकते हैं कि संस्कृति सामूहिक या सामाजिक जीवन को सुदृढ़, सुचारू, आदर्शमयी, सुसभ्य एवं जीवन यापन करने का वह ज्योतिर्मयी मार्ग है जिसका लक्ष्य मानव को सर्वोच्च प्राणी बनाने में सक्षम है।

विषय संबंधी विद्वजन संस्कृति को भौतिक एवं अभौतिक दो रूपों में मान्यता प्रदान करते हैं। मौलिक संस्कृति के संदर्भ में मानव निर्मित ठोस मूर्त या देख और स्पर्श कर लेने वाली वस्तुओं की गणना की जाती है जब कि अभौतिक संस्कृति के अंतर्गत अदृश्य-अमूर्त अर्थात् रीति-रिवाज मूल्यों मान्यताओं आचार-विचार आदि को महत्त्व दिया जाता है।

'संस्कृति' एक यौगिक शब्द है जिसकी उत्पत्ति 'कृ' धातु में 'सम्' उपसर्ग और ति' प्रत्यय लगाकर की गई है जिसका अर्थ है- परिष्कृत एवं परिमार्जित कर उत्तम स्थिति में लाना। इसीलिए शिष्टाचारी, सुविचारी, सुभाषी मनुष्यों का बुद्धिसंग प्रयोग कर कर्म क्षेत्र का सृजन संस्कृति कहलाता है।

संसार में प्रत्येक देश के समाज या समूह के जीवनयापन, रहन-सहन, आचार-विचार की अपनी शैली होती जिसे मूर्त-अमूर्त दोनों रूप में देखा जाता है। सामान्यता इसे संस्कृति की संज्ञा दी जाती है। इस संस्कृति के मध्य एक रेखा खींचकर इसे शहरी संस्कृति और ग्रामीण संस्कृति में विभक्त कर दिया जाता है। भारतीय संस्कृति भी इसका अपवाद नहीं। आलोच्य विषय का केंद्र बिंदु भारतीय ग्रामीण संस्कृति है। अतः इसपर संक्षेप में विमर्श युक्ति संगत है।

कृषि प्रधान देश होने के नाते ग्रामीण संस्कृति भारत की आत्मा या हमारे राष्ट्र की सर्वव्यापी अथवा सर्वविदित पहचान है। संसार के अन्य देशों की तुलना में हमारी भारतीय संस्कृति का आधारभूत बिंदु इस की सहजता, सरलता, भाईचारा, सामन्जस्य, अपनापन और परस्पर सहयोग की भावना है। कृषि पशुपालन एवं प्रकृति से सानिध्य प्रेमभाव, संयुक्त पारिवारिक जीवन शैली, आडंबरमुक्त सरल स्वाभाविक जीवन, रीति-रिवाज अनेक त्यौहार, विभिन्न लोक

कलाएँ, धार्मिक झाकियाँ, मेले-ठेले और समाज दर्शनाधारित तत्त्वों के अनुरूप सुख-शांतिपूर्ण जीवन भारतीय ग्रामीण संस्कृति को जीवंत एवं गतिमान बनाए रखने में सदासर्वदा सहायक रहते हैं।

सोनवानी ग़ निवासी माता-पिता जविता देवी और शिवपाल राय के पुत्र विवेकी राय के जन्म से एक डेढ़ माह पूर्व ही पिता का देहांत होने के कारण उनका पालन-पोषण भरौली जिला बलिया में ननिहाल में हुआ। पढ़ लिखकर शिक्षक होने के उपरांत भी उनका जुडाव, लगाव और रुझान कृषक रूप में जीवन यापन पर रहा। इस के साथ ही वे निरंतर गाँधी जी और स्वतंत्रता आंदोलन से जुड़े रहे। उन्होंने जीवन की लगभग सात दहाइयों में भारतीय ग्रामीण संरकृति के उत्थान-पतन, परिवर्तन और विघटन को व्यक्तिगत रूप से देखा और भोगा है। यही कारण है कि उनके कथा साहित्य में आंचलिक अथवा ग्रामीण परिवेश, कृषि, खेती-बाड़ी, खेत-खलियान, कृषि-शैली, पेड़-पौधे, बाग-बगीचे, झील-झरने नदियाँ-तालाब सामाजिक, धार्मिक पर्व-त्यौहार लोक में व्याप्त देवी-देवता, मंदिर-मठ रीति-रिवाज रुढ़ियाँ एवं परम्पराएँ खान-पान, रहन-सहन, वेशभूषा एवं मेले-ठेलों का वर्णन प्रमुख एवं प्रचुर मात्रा में मिलता है। इस अति दीर्घ सात दशकों के काल में ग्रामीण संस्कृति में परिवर्तन, बदलाव, विकार आदि जो शहरी आधुनिक या पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव से उत्पन्न हुए उन्होंने भारतीय ग्रामीण संस्कृति को विघटनोन्मुख किया। साहित्यकार समाज का कोना-कोना झाँक लेता है। विवेकी राय ने इस विघटन का आभास किया और अपनी रचनाओं, मुख्य रूप से उपन्यासों के माध्यम से अपनी इस पीड़ा को प्रस्तुत अथवा प्रदर्शित किया।

ग्रामीण संस्कृति में सर्वप्रथम विघटन खान-पान और रहन सहन में देखने को मिलता है। जौ, मटर ज्वार, बाजरा की रोटियाँ बड़े चाव से खाने वाले ग्रामीण अब गेहूँ चावल के भोजन और हलवा-माँडा, पूरी-कचौरी एवं अन्य शहरी व्यंजनों को अपनी खुराक का हिस्सा बना चुके हैं। प्याज की गँठी, गुण धनिया, पोदीना अमिया, इमली आदि के साथ हरी-लाल मिर्च की चटनी भूल चुके हैं। ग्रामीण वृक्षों, फलों की छाया और स्वाद के साथ नामों तक से अनभिज्ञ यह ग्रामीण पीढ़ी आधुनिक चमक-दमक को अपनाकर संतुष्ट है। ग्रामीण क्षेत्रों में गुणपानी और राब खाँड शक्कर जैसे पदार्थों के स्थान पर चाय, नमकीन, बिस्किट आदि परोसकर अब बडप्पन का प्रमाण देना सामान्य-सी बात हो गई है। मोटे-झोटे अनाज के स्थान पर महीन खाने खाकर शरीर फुलाकर कुप्पा कर लिए है किंतु शक्ति के नाम पर शून्य जैसा स्थिति बन गई है।

पीपल, पाकड़ बरगद, गूलर लभैड़ा, झड़बेरी, जंगल जलेबी, देसी इंजीर, मकोई गुलकाँकड़ी सबकुछ बिसरा दिया गया। पीपल-पाकड़ का गोदा, गुल्लर का फल या सागभात खाकर गुज़र करने वाला युग लद गया। आज व्यक्ति पूर्णतया अन्न पर अवलंबित हो गया है।

ग्रामीण क्षेत्रों में भोजन बनाने के लिए चूल्हे जलते थे। मक्का, बाजरे, ज्वार के ठूंठ, अरहर के झंबे, सनकुटी, लकड़ी, स्टोव, कोयले और बुरादे को अँगीठिया सबकुछ विलुप्त हो गया। गोबर के कंडे और बिटोरे गायब बिजली के हीटर या गैस से खाना बनाया जाना सामान्य-सी बात है।

चौके चूल्हे को लीप-पोत कर शुद्ध शकाहारी या वैष्णवी आहार की कल्पना ही की जा सकती क्योंकि अब ग्रामीण संस्कृति में इसका स्थान सर्वहारी भोजन ने ले लिया है।

ग्रामीण संस्कृति में खान-पान के साथ-साथ रहन-सहन और वेश भूषण में भी विघटन देखने को मिलता है। परंपरागत वस्त्रों के स्थान पर माडर्न टेलरिंग आ गई है बल्कि इससे आगे बढ़कर 'रेडीमेड' ने ग्रामीण क्षेत्रों में अपने पाँव जमा लिए। धोती, कुर्ता, अंगरखा, गमछा सीनाबंद (सदरी) बंडी, अद्धा, कमीस आदि देहात से लगभग पलायन कर गए हैं।

मिट्टी के कच्चे घर, छप्पर, उसारे, झोंपड़ी गधड्या छाप छप्पर, दालान, आगन चौपाल-चबूतरे सब पतनोंन्मुख पक्के बहुमंजिला मकान ड्राइंगरूम, बाथरूम, लेटरीन आदि की संस्कति जड़ पकड़ती जा रही है। कुम्हार, लुहार बढ़ई, कहार, तेली आदि अपनी कलाओं को भूलते जा रहे हैं। वास्तुकला एवं भवन निर्माणकला अपने ग्रामीण स्वरूप को लगभग खो चुकी हैं। पनघट, बावरी, कुएँ सभी विलुप्त हो गए।

लोगगीत-संगीत, डोम, भाँड, भाट, बहुरूपिए आदि अब मात्र पुस्तकों या वृद्धों के स्मरण में रह गए। बसंत, होली, टेसू आदि से संबंधित लोकगीतों एवं गायन का ह्रास हो चुका है।

"आज त्यौहारों परगीत गाना भी लोगों को रुचिकर नहीं लग रहा है। 'समर शेष है' में उपन्यास का मुख्य पात्र रामराज होलीगीत की संतोषी पंडित के मुख से प्रशंसा सुनकर कहता है आप रसीला गाते है? हम लोगों के लिए तो यह जंगली जैसा और गला-फाड़ हो-हो सिर यर्द हो गया है।

परस्पर वाद-विवाद, मनमुटाव या लड़ाई-झगड़ा हो जाने पर, बड़े बीच में पड़कर इसे निपटा देते। उनका निर्णय दोनों पक्षों को मान्य होता। सहयोग माँगना नहीं पड़ता था लोग स्वयं आगे बढ़कर एक दूसरे का सहयोग करते। संयुक्त परिवार की दीक्षा के चलते लोगों में सहकारिता की प्रवृति का होना सामान्य-सी बात थी। धीरे-धीरे शहरी संस्कृति के प्रभाव को स्वीकार करते हुए एकाकी परिवार की वृत्ति बढ़ी और इस क्षेत्र में संयुक्त परिवारों के ह्रास के साथ सहकारिता एवं सहयोग जैसे गुणों का विघटन हुआ। विवेकी राय ने 'नया गाँवनामा' में इस विषय में जो चिंता व्यक्त की उस पर दृष्टिपात करना युक्ति संगत प्रतीत होता है।

"गाँव में पारिवारिक मूल्यों और मान्यताओं का कहीं नामो निशान भी नहीं रह जाएगा। परिवारों की ही छाप समग्र रूपसे गाँव पर दृष्टिगोचर हो रही है। पारिवारिक इकाइयों के टूटने से गाँव टूट रहे हैं। एक ही परिवार में कई परिवार जैसे एक गाँव में कई-कई गाँव हैं।"

बदलते परिवेश में ग्रामीण संस्कृति का विघटन प्रत्येक क्षेत्र में दृष्टिगत होता है। यहाँ तक कि शिक्षा प्राप्त ग्रामीण युवा, पान गुटका, बीड़ी, सिग्रेट, चरस गाँजा, अफीम यहाँ तक कि मदिरापान तक कर रहा है। जो युवा वर्ग बड़ों के सामने खड़े तक नहीं होते थे आज उपर्युक्त सेवन करते हुए उनसे बात और तकरार तक कर लेते हैं। शहरी प्रभाव परिवार से काटकर उन्हें विवाह जैसे गंभीर विषय पर माता-पिता से विमर्श तक को एक प्रकार से रूढ़िवादिता समझता है और विवाह को प्रेम विवाह और अंतर्जातीय विवाह तक ले जाता है। विचार धाराएँ और अवधारणाएँ बदल रही हैं। युवा पीढ़ी के विचार में ढलती दूसरी अर्थात् पिता की पीढी जब दादा वाली पीढी को संतान की विचारधारा को स्वीकारने की बात करती है तो ग्रामीण संस्कृति का पतनोन्मुख होना स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है।

"समर शेष है" में रामराज माँ-बाप को अपने बच्चों की शादी के लिए चिंता न करने की बात करता है। वह कहता है कि उन्हें अपने विवाह की चिंता स्वयं करने दीजिए। मत बनाइए खोखली शिक्षा और तिजारती विवाह में फंसाकर नई पीढ़ी को मुँहचोर, दब्बू और महत्त्वाकाँक्षाहीन।

विवाह समाज-दर्शन का अति महत्त्वपूर्णतत्त्व माना जाता है। मुख्य रूपसे इस की मर्यादा अमिट होती थी। परपरागत ढंग से माता-पिता अपनी इच्छानुसार देखभाल और सोच समझ कर सुंदर ढंग से इसे संपन्न कराते इसमें उनकी संतान का कुशल एवं सुख-शांतिपूर्ण भविष्य स्थापित करने का सतुद्देश्य होता। आामीण संस्कृति पतनोन्मुख हुई तो युवावर्ग अपने उद्देश्य की पूर्ति हेतु आधुनिक मनोविज्ञान का आश्रय लेकर एक दूसरे को विद्रोह पर उकसाकर लक्ष्य प्राप्ति का प्रयास करते। 'समर शेष है' में सुराज अपनी प्रेमिका जयंती उर्फ जनता को अपना साथ देने के लिए कुलपरंपरा, रीतियाँ, बंधन सब कुछ तोड़ने का साहस जुटाने की बात करता है जो स्पष्टतया सामाजिक मूल्यों अथवा ग्रामीण संस्कृति के पतन या विघटन पर चोट है जो ग्रामीण संस्कृति के विघटन की ओर संकेत करती है। वह समझाता है- "हम लोग गलत जीवन जी रहे हैं और यह अच्छी बात नहीं है। बुद्धिजीवी जानबूझ कर क्यों गलत जीवन जीये? वह गलत के प्रति संघर्ष करे। इस भद्दी सामाजिक व्यवस्था के विरुद्ध कोई कदम तो उठाना चाहिए। मगर एकदम ऐसा भयानक नहीं लेकिन कठोर और भयानक नहीं होगा तो वह आमूल परिवर्तनकारी कैसे होगा।"

ऐसे वैचारिक परिवर्तन के फलस्वरूप पांडित स्वयं रामराज की अवधारणा से सहमत हो जाता है। यह मन-मस्तिष्क के आंतरिक अंतर्दृवंद का परिणाम है जो सांस्कृतिक विघटन को न्यौता दे रहा है। फलस्वरूप यह अपनी पुत्री का अंतर्जातीय विवाह उसके प्रेमी कुम्हार जाति के धनसेरा से संपन्न करने का निर्णय ले लेता है। वह धनसेरा से गंभीर मुद्रा में बात करते हुए कहता है-

"सारे अस्वीकारों की रक्षा के लिये मुझे अब एक जबरदस्त स्वीकार का स्वागत् करना पड़ेगा। यह स्वीकार लेकिन ऐसा है कि असली म्याऊँ का मुँह है, उसके खुलते ही सारी-सारी परंपराओं और मर्यादाओं के चूहे पता नहीं भाग चलेंगे कि सब मिलकर घोर विद्रोह कर नींद हराम कर देंगे। एक बड़ी भारी व्यक्तिक लड़ाई और एक भीषण सामाजिक विद्रोह दोनों में मेरी प्रतीक्षा कर रहे हैं। अब मैं पीछे हटने वाला नहीं। हम जिस राह पर चल रहे हैं वही एक मात्र राह है और कोई राह नहीं।

उपर्युक्त अवतरण में विवेकी राय बुद्धिजीवी वर्ग के माध्यम से एक प्रकार का सामाजिक परिवर्तन लाने के लिए प्रेरित करते हैं। विवेकी राय के उपन्यासों में ग्रामीण सांस्कृति के विघटन के दोनों पक्ष परिलक्षित होते हैं। यदि सांस्कृतिक मूल्यों का ह्रास अथवा पतन हुआ है तो इस विघटन में सांस्कृतिक परिवर्तन एवं जागरूकता का पक्ष भी प्रबल है।

सन्दर्भ:

1. राय विवेकी, नमाम ग्रामम् पृ०सं०-85
2. रायविवेको, समर शेष है- पृ० सं० 197
3. राय विवकी- नया गाँवनामा पृ०सं० 1
4. राय विवेकी- समर शेष है- पृ० सं० 70
5. राय विवेकी- समर शेष है, पृ० सं०-70-71
6. राम विवेको समर शेष है, सं० 508